# विकास के लिये पर्यावरण की उपेक्षा कब तक ?

आज समग्र मनुष्य जाति पर्यावरण के बढ़ते असंतुलन से संत्रस्त है। इधर तेज रफ्तार से बढ़ती दुनिया की आबादी, तो दूसरी तरफ तीव्र गति से घट रहे प्राकृतिक ऊर्जा स्रोत। समूचे प्राणि जगत के सामने अस्तित्व की सुरक्षा का महान संकट है। पिछले लम्बे समय से ऐसा महसूस किया जा रहा है कि वैश्विक स्तर पर वर्तमान में सबसे बड़ी समस्या पर्यावरण से जुडी हुई है। इसके संतुलन एवं संरक्षण के सन्दर्भ में पूरा विश्व चिन्तित है। आज पृथ्वी विनाशकारी हासिए पर खड़ी है। सचमुच आदमी को जागना होगा। जागकर फिर एक बार अपने भीतर उस खोए हुए आदमी को ढूंढना है जो सच में खोया नहीं है, अपने लक्ष्य से सिर्फ भटक गया है। यह भटकाव पर्यावरण के लिये गंभीर खतरे का कारण बना है।

पानी के परंपरागत स्रोत सूख रहे हैं। वायुमण्डल दूषित, विषाक्त हो रहा है। माटी की उर्वरता घट रही है। इससे उत्पादन में कमी आ रही है। भू-क्षरण, भूमि का कटाव, नदियों द्वारा धारा परिवर्तन-ये घटनाएं आये दिन घटित हो रही हैं। बाढ़, भूस्खलन और भूकंप प्रतिवर्ष तबाही मचा रहे हैं। इससे मनुष्य की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक समृद्धि के भविष्य पर अनेक प्रश्नचिह्न उभर रहे हैं। पर्यावरण चिन्ता की घनघोर निराशाओं के बीच एक बड़ा प्रश्न है कि कहां खो गया वह आदमी जो स्वयं को कटवाकर भी वृक्षों को काटने से रोकता था ? गोचरभूमि का एक टुकड़ा भी किसी को हथियाने नहीं देता था। जिसके लिये जल की एक बूंद भी जीवन जितनी कीमती थी। कत्लखानों में कटती गायों की निरीह आहें जिसे बेचैन कर देती थी। जो वन्य पशु-पक्षियों को खदेड़कर अपनी बस्तियां बनाने का बौना स्वार्थ नहीं पालता था। अपने प्रति आदमी की असावधानी, उपेक्षा, संवेदनहीनता और स्वार्थी चेतना को देखकर प्रकृति ने उसके द्वारा किये गये शोषण के विरुद्ध विद्रोह किया है, तभी बार-बार भूकम्प, चक्रावत, बाढ़, सुखा, अकाल जैसे हालात देखने को मिल रहे हैं।

इस संकट का मूल कारण है प्रकृति का असंतुलन। औद्योगिक क्रांति एवं वैज्ञानिक प्रगति से उत्पन्न उपभोक्ता संस्कृति ने इसे भरपूर बढ़ावा दिया है। स्वार्थी और सुविधा भोगी मनुष्य प्रकृति से दूर होता जा रहा है। उसकी लोभ की वृत्ति ने प्रकृति को बेरहमी से लूटा है। इसीलिए पर्यावरण की समस्या दिनोंदिन विकराल होती जा रही है। न हवा स्वच्छ है, न पानी। तेज शोर आदमी को मानसिक दृष्टि से विकलांग बना रहा है। ओजोन परत का छेद दिनोंदिन बढ़ रहा है। सूरज की पराबैंगनी किरणें, मनुष्य शरीर में अनेक घातक व्याधियाँ उत्पन्न कर रही हैं। समूची पृथ्वी पर उनका विपरीत असर पड़ रहा है। जंगलों-पेड़ों की कटाई एवं परमाणु ऊर्जा के प्रयोग ने स्थिति को अधिक गंभीर बना दिया है।

जहाँ समस्या है, वहाँ समाधान भी है। अपेक्षा है, प्रत्येक व्यक्ति अपना दायित्व समझे और इस समस्या

का सही समाधान ढूँढे। महात्मा गांधी ने कहा-सच्ची सभ्यता वही है, जो मनुष्य को कम से कम वस्तुओं के सहारे जीना सिखाए। अणुव्रत प्रवर्तक आचार्य तुलसी ने कहा-सबसे संपन्न व्यक्ति वह है जो आवश्यकताओं को कम करता है, बाहरी वस्तुओं पर कम निर्भर रहता है।" महापुरुषों के ये शिक्षा सूत्र समस्याओं के सागर को पार करने के लिए दीप-स्तंभ का कार्य कर सकते हैं।

हम जानते हैं-कम्प्यूटर और इंटरनेट के युग में जीने वाला आज का युवा बैलगाड़ी, चरखा या दीये की रोशनी के युग में नहीं लौट सकता फिर भी अनावश्यक यातायात को नियंत्रित करना, यान-वाहनों का यथासंभव कम उपयोग करना, विशालकाय कल-कारखानों और बड़े उद्योगों की जगह, लघु उद्योगों के विकास में शांति/संतोष का अनुभव करना, बिजली, पानी, पंखे, फ्रिज, ए.सी. आदि का अनावश्यक उपयोग नहीं करना या बिजली-पानी का अपव्यय नहीं करना, अपने आवास, पास-पड़ोस, गाँव, नगर आदि की स्वच्छता हेतु लोकचेतना को जगाना-ये ऐसे उपक्रम हैं, जिनसे आत्मसंयम पुष्ट होता है, प्राकृतिक साधन-स्रोतों का अपव्यय रुकता है। प्रकृति के साथ सहयोग स्थापित होता है और पर्यावरण की सुरक्षा में भागीदारी हो सकती है।

देश के भावी नागरिकों यानी बच्चांे को जिम्मेदार नागरिक बनाने के लिए जरूरी है कि उन्हें पर्यावरण के प्रति संवदेनशील बनाया जाए। पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों के साथ प्रेमपूर्ण सहअस्तित्व का बोध कराया जाए। चमड़े आदि प्राणी-हिंसा जन्य वस्तुओं के उपयोग से होने वाली पर्यावरण की क्षति और उसके दुष्प्रभावों से परिचित कराया जाए। कागज पेन्सिल की जगह बच्चे यदि स्लेट व ब्लैक बोर्ड का उपयोग अधिक करने लग जाते हैं तो वे पर्यावरण की क्षति को रोकते हैं। पॉलीथिन का अधिक उपयोग धरती की उर्वरता को नष्ट करता है। उसका उपयोग भी सीमित व विवेकयुक्त हो। संचार क्रांति ने पत्र-पत्रिकाओं के अंबार लगा दिये हैं। अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं के लिए जितने कागज की खपत होती है, उसके लिए कितने पेड़ काटे जाते हैं ? यह पर्यावरण पर सीधा आक्रमण है।

खान-पान की शुद्धि और व्यसन मुक्ति भी पर्यावरण- सुरक्षा के सशक्त उपाय हैं। खान-पान की विकृति ने मानवीय सोच को प्रदूषित किया है। संपूर्ण जीव जगत के साथ मनुष्य के जो भावनात्मक रिश्ते थे, उन्हें चीर-चीर कर दिया है। इससे पारिस्थितिकी और वानिकी दोनों के अस्तित्व को खुली चुनौती मिल रही है। नशे की संस्कृति ने मानवीय मूल्यों के विनाश को खुला निमंत्रण दे रखा है। तम्बाकू रहित समाज के निर्माण में सशक्त भूमिका निभानी होगी। धूम्रपान एवं मद्यपान स्वस्थ सभ्यता और स्वस्थ मानसिकता के खिलाफ है। तम्बाकू एक तीखा, जहरीला मादक पदार्थ है। इससे कैंसर तथा श्वसन संबंधी रोग हो जाते हैं। पान मसाला तथा पान के साथ खाया जाने वाला तम्बाकू बहुत ही हानिकारक होता है, विश्व में प्रतिवर्ष तीन करोड़ लोग कैंसर तथा तम्बाकू जनित अन्य रोगों के शिकार हो रहे हैं। यदि तम्बाकू का सेवन छोड़ दिया जाए तो कैंसर की 65 प्रतिशत संभावना कम हो सकती है। आज किशोर और युवक बड़ी संख्या में तम्बाकू के शिकार हो रहे हैं। स्कूली बच्चों में भी खैनी, चुटकी, पान-मसाला और गुटखा खाने की प्रवृत्ति बहुत अधिक बढ़ रही है, यह चिंता का विषय है। वाहनों का प्रदूषण, फैक्ट्रियों का धुँआ, परमाणु परीक्षण-इनको रोक पाना किसी एक व्यक्ति या वर्ग के वश की बात नहीं है। पर कुछ छोटे-छोटे कदम उठाने की तैयारी भी महान क्रांति को जन्म दे सकती है।

जिस तरीके से देश को विकास की ऊंचाई पर खड़ा करने की बात कही जा रही है और इसके लिए

औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है, उससे तो लगता है कि प्रकृति, प्राकृतिक संसाधनों एवं विविधतापूर्ण जीवन का अक्षयकोष कहलाने वाला देश भविष्य में राख का कटोरा बन जाएगा। हरियाली उजड़ती जा रही है और पहाड़ नग्न हो चुके हैं। नदियों का जल सूख रहा है, कृषि भूमि लोहे एवं सीमेन्ट, कंकरीट का जंगल बनता जा रहा है। महानगरों के इर्द-गिर्द बहुमंजिले इमारतों एवं शॉपिंग मॉल के अम्बार लग रहे हैं। उद्योगों को जमीन देने से कृषि भूमि लगातार घटती जा रही है। नये-नये उद्योगों की स्थापना से नदियों का जल दूषित हो रहा है, निर्धारित सीमा-रेखाओं का अतिक्रमण धरती पर जीवन के लिये घातक साबित हो रहा है। महानगरों का हश्र आप देख चुके हैं। अगर अनियोजित विकास ऐसे ही होता रहा तो दिल्ली, मुम्बई, कोलकता में सांस लेना जटिल हो जायेगा।

इस देश में विकास के नाम पर वनवासियों, आदिवासियों के हितों की बलि देकर व्यावसायिक हितों को बढ़ावा दिया गया। खनन के नाम पर जगह-जगह आदिवासियों से जल, जंगल और जमीन को छीना गया। कौन नहीं जानता कि ओडिशा का नियमागिरी पर्वत उजाड़ने का प्रयास किया गया। आदिवासियों के प्रति सरकार तथा मुख्यधारा के समाज के लोगों का नजरिया कभी संतोषजनक नहीं रहा। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी अक्सर आदिवासी उत्थान और उन्नयन की चर्चाएं करते रहे हैं और वे इस समुदाय के विकास के लिए तत्पर भी हैं। क्योंकि वे समझते हैं कि आदिवासियों का हित केवल आदिवासी समुदाय का हित नहीं है प्रत्युत: सम्पूर्ण देश, पर्यावरण व समाज के कल्याण का मुद्दा है जिस पर व्यवस्था से जुड़े तथा स्वतन्त्र नागरिकों को बहुत गम्भीरता से सोचना चाहिए।

विकास के लिये पर्यावरण की उपेक्षा गंभीर स्थिति है। सरकार की नीतियां एवं मनुष्य की वर्तमान जीवन-पद्धति के अनेक तौर-तरीके भविष्य में सुरक्षित जीवन की संभावनाओं को नष्ट कर रहे हैं और इस जीती-जागती दुनिया को इतना बदल रहे हैं कि वहां जीवन का अस्तित्व ही कठिन हो जायेगा। प्रकृति एवं पर्यावरण की तबाही को रोकने के लिये बुनियादी बदलाव जरूरी है और वह बदलाव सरकार की नीतियों के साथ जीवनशैली में भी आना जरूरी है।

(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कंुज अपार्टमेंट
25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92
फोन: 22727486, 9811051133